ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-244-246,YEAR- DEC.2016

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का उत्थान और आर्थिक पत्र – एक विश्लेषण

❑ डॉ0 सानन्द कुमार सिंह

1947 को भारत की ब्रिटिश शासन से मुक्ति कठिन संघर्षों का परिनाम थी अंग्रेजी शासन काल के अंतर्गत विभिन्न कारणों से भारतीय जनता में राष्ट्रीयता की भावना का विकास हुआ। भारत में राष्ट्रीयता के विकास बड़ी जटिल है। यहाँ की अर्थव्यवस्था का आधार यूरोपीय देशों के पूँजीवाद से पूर्ववर्ती काल के समाज से भिन्न था। भारत विभिन्न भाषाओं, विभिन्न धर्मो तथा बहुत बड़ी आवादी वाला देश था। राष्ट्रवाद के पनपने के कारणों में इन्ही विविधताओं, ब्रिटिश नीतियों इत्यादि की प्रतिक्रिया थी। ई. एच. कार ने लिखा है "सही अर्थ में राष्ट्रवाद का उदय मध्य युग की समाप्ती पर हुआ।"

राष्ट्र का उत्थान सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के खास दौर में राष्ट्र का जन्म हुआ। लेकिन राष्ट्र अपने अराष्ट्रिक समूह से निम्न विशेषताओं के कारण अलग होते हैं। ए. आर. देशाई ने अपनी पुस्तक में आगे विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है राष्ट्र के सारे सदस्य किसी निश्चित भू–भाग में एक ही अर्थतंत्र के अर्न्तगत परस्पर जैविक रूप से संयूक्त होते हैं, जिसके फलस्वरूप उनमें सम्मिलित आर्थिक अस्तित्व का अभाव होता है, वं प्रायः एक ही भाषा का प्रयोग करते हैं, उनकी एक सी मनोवैज्ञानिक संरचना और उससे निकसित सार्वजनिक लोकसंस्कृति होती है। लेकिन यह आदर्श राष्ट्र की कल्पना भावनात्मक है। ई. एच. कार ने राष्ट्र की परिभाषा देते हुए लिखा है राष्ट्र शब्द से जैसे मानव समूह का बोध होता है उसके लक्षण हैं –

(1) अतीत और वर्तमान में वास्तविकता अथवा भविष्य के रूप में सर्वनिष्ठ सरकार की स्थापना।
(2) अपना अलग विशिष्ट आकार और सदस्यों का पारस्परिक सम्पर्क्यसामीप्य।
(3) न्यूनाधिक निर्धारित विशेषतायें जो किसी राष्ट्र को अन्य राष्ट्रों और अराष्ट्रिक समुदायों से अलग करती है।
(4) सदस्यों के मन में जो छवि है उससे संबंधित समभाव या इच्छाशक्ति।

राष्ट्रवाद के परिभाषा को webster Dictionery के अनुसार – राष्ट्र के प्रति जनता का समर्पन एवं निष्ठा आवश्यक है। राष्ट्रवाद एक संप्रत्यय है जो किसी भी देश के हित को राष्ट्र की संप्रभुता को बनने में उस देश की जनता का प्रयास है। इंग्लैंड में राष्ट्रवाद का विकास थोड़ा पहले हुआ– क्योंकि अन्य देशों की तुलना में व्यापार एवं उद्योग का विकास हुआ लोग विनिमय साधनों में बँधते गये, गणतंत्रात्मक एवं राष्ट्रवादी विचारों का उदय हुआ, जिन्होंने राज्य, समाज और व्यक्ति के पद और प्रतिष्ठा संबंधी सामंती सिद्धांतों पर आघात किया। सत्तरहवी, अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताव्दी में संसार के अधिकाधिक क्षेत्रों में राष्ट्र का निर्माण हुआ, पूर्ण विकसित होने के कारण लिए नवजात राष्ट्र बाहरी एवं भीतरी अवरोधों के खिलाफ संघर्षशील रहे। राष्ट्र निर्माणकी प्रक्रिया बीसवीं सदी में भी जारी रही। एशिया ही नहीं बहुत सारी राष्ट्र जातियों ने अपनी स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया। हंगरी, चेकोस्लोवाकिया के जातियों ने साम्राज्य की सत्ता के विरूद्ध विद्रोह किया।

राष्ट्रसंघ और संयुक्त राष्ट्रसंध की स्थापना ने बता दिया कि मानव समाज मूलतः राष्ट्र निर्मित है, राष्ट्र ही लोक जीवन का सर्वमान्य संप्रत्यय है। राष्ट्र को मूल में रखकर ही मानव समाज के प्रत्येक प्रभाग को पल्लवित, पोषितकरना ही लक्ष्य है। इसलिए राष्ट्र के निर्माण में राष्ट्रवादी सिद्धांत ज्यादा आवश्यक है। अगर राष्ट्र आज का सत्य है, तो राष्ट्रीयता मानव मात्र की मूल भावना। समाजवाद, पूँजीवाद या किसी

❑ एसो0 प्रोफेसर – राजनीतिक विज्ञान विभाग, सतीश चन्द्र कालेज, बलिया (उ0प्र0), भारत

भी संप्रत्यय में जब भी राष्ट्र को देखते हैं तो विश्व संसार के पटल पर नवनिर्माण में राष्ट्रों की ही सर्वप्रधान इकाई माना जाता है। भारत विभिन्न भाषाओं, विभिन्न धर्मों तथा बहुत बड़ी आवादी वाला देश है। भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की पृष्ठभूमि की यह विशेषता है कि खासतौर पर हिन्दू समाज और सामान्यतः सारा भारतीय समाज खंडित एवं विभाजित रहा, लेकिन भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म राजनैतिक पाराधीनता के समय हुआ।

ब्रिटेन ने नवीन आर्थिक ढाँचा विकसित किया, केन्द्रीभूत राज व्यवस्था को कायम किया आधुनिक शिक्षा पद्धति, प्रेस पर प्रतिवंध, आधुनिक स्कूल, कालेज, आवागमन के साधनों का विकास, डाक–तार का विकास, इत्यादि नए संस्थाओं का निर्माण किया। फलस्वरूप नये सामाजिक वर्ग का जन्म हुआ और अपने आप में नई सामाजिक शक्तियों का उदय सम्भव हो सका। ये नये सामाजिक तत्व राष्ट्रीयता के विकास की आधारशीला ही नहीं प्रेरणा स्त्रोत भी सिद्ध हुए।

भारत का बदलता हुआ आर्थिक परिदृश्य–

भारत की आर्थिक व्यवस्था का मुख्य
आधार ग्रम्य व्यवस्था को जाता है। भारतीय ग्राम्य व्यवस्था अपने आप में एक रिपब्लिक की तरह काम करते थे। जहाँ बढ़ई, लोहार, कृषक, मोची सभी जनता की आवश्यक्ता को पूर्ण कर रहे थे। जिस युग में भारत में विदेशी कंपनियाँ भारत आ रही थीं। यहाँ पर प्राचीन काल से देशी पूँजी वणिक वर्ग था जो निरंतर शक्ति संचय कर रहा था, लेकिन मुगल वर्ष समाप्त हो रहा था तब मध्य वर्ग का उदय होना शुरू हो गया था, लेकिन मध्यम वर्ग के द्वारा वस्तुओं का वितरण एवं विनिमय के फलस्रूप शहरों में व्यापारिक केन्द्रों का जन्म होने लगा था।

इन शहरों की तरफ हस्त शिल्पियों के विभिन्न वर्ग आकृष्ट हुए और यहाँ पर उपयोग–उपभोग के स्थान पर विनिमय निर्यात के लिए वस्तुओं का उत्पादन होने लगा था।

भारतीय समाज के पुरातन आर्थिक आधार को नष्ट करके उसकी जगह पूँजीवादी आर्थिक आवश्यकताओं के लिए औपनिवेशिक भारत का समुचित उपयोग नहीं कर सकता था। अंग्रेजी नीतियों का साधारण प्रयोजन – हालांकि कुछ अंग्रेज विद्धान इसे सामाजिक सुधार कहते हैं – परम्परागत भारतीय अर्थव्यवस्था का योजनाबद्ध विनाश करना था। भारत में सामंती प्रथा एक नवीन रूप ले लिया। नई लगान व्यवस्था ने जमीन पर लोगों के जमाने से चली आ रही मिल्कियत खत्म करके उसकी जगह भू–स्वामित्व के दो रूपों को जन्म दिया। उत्तरी भारत में जमींदारी प्रथा लागू की गयी, जिसमें जमींदारों का नया वर्ग पैदा हो गया जो जमीन का मालिक बन गया। दक्षिण भारत में किसान जमीन का मालिक बन गया। जमीन अब विकाऊ माल बन गया, जिसे खरीदा बेचा जा सकता है। इसी बीच आवागमन के साधनों का विकास हुआ। पूँजी के व्यापक प्रभाव के कारण किसान के लिए बाजार की सुविधा प्राप्त हुई और अब वो बाजार के हिसाब से सामान पैदा करने लगा।

भूमिकर व लगान की राशि प्रायः ज्यादा होती थी। लगान और महाजन का ऋण चुकाने के लिए ज्यादा धन की आवश्यक्ता थी। इस प्रकार कृषि का वाणिज्यीकरण हुआ। कृषि पर आधारित किसान अब खास किस्म का पैदावार करने लगा। चारागाह एवं जंगल जो पहले मुफ्त प्राप्त होते थे अब कानून के द्वारा अपना लिए गए। भारतीय कृषि की संकीर्णता, नवीन तकनीकि द्वारा खेती, आधुनिक यंत्रों द्वारा खेती, किसान की समस्याये आदि अब संपूर्ण भारत की समस्या बन गयी। किसान गरीब एवं दरिद्रता बढ़ती गयी, भूस्वामित्व खत्म होते गये। किसान अब और गरीब होते चले गये।

अंग्रेजों द्वारा भारत का आर्थिक शोषण–

अंग्रेजों द्वारा भारत का आर्थिक शोषण किया जाना आरंभ किया। ब्रिटिश अधिकारी ब्रिटेन के व्यापारियों और शिल्प उत्पादकताओं के हित में भारती लधु उद्योगों को नष्ट करते गये। ब्रिटेन के दो उद्देश्य थे–

(1) भारत को एक बड़ा बाजार बनाया जाये, जिससे वहाँ बना माल भारतीयों को बेच सके।

(2) भारत को सस्ता तथा अधिक मात्रा के कच्चे माल के उत्पादक कृषि क्षेत्र में बदलना।

मेजर बी.डी.वसु ने इंग्लैंड द्वारा भारतीय शिल्प के हनन के लिए राजनीतिक शक्ति के प्रयोग के लिए ध्यान आकर्षित किया उनके अनुसार ये ढंग निम्न थे:–

(1) भारत पर मुक्त व्यापार प्रणाली को थोपना।
(2) भारतीय निर्माताओं के माल पर इंग्लैण्ड में आयात करने पर अत्यधिक शुल्क
(3) भारत में कच्चे माल का निर्यात
(4) भारतीय माल पर आते जाते समय कर
(5) विदेशी निर्माताओं का उद्योग लगाने के लिए विशेष सुविधा
(6) भारतीय शिल्पियों को अपने रहस्य देने पर विचर करना।
(7) व्यापार में मेलों तथा प्रदर्शनियों को लगाना।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. इरफान, हबीब एम.– इंडियन नेशनलिज्म–दी (2016) इशेनशियल राइटिंगस।
2. दत्त, आर. सी.– (1902) मूनरो एवम् रैय्यतवाड़ी व्यवस्था (1820–27).
3. दत्त, आर. सी.– (1902) विनगेटे एवम् रैय्यतवाड़ी व्यवस्था (1827–35).
4. बनर्जी, अभिजित, लक्ष्मी (2005) – हिस्ट्री, इंस्टीच्यूशन एंड इकोनामिक परफार्मेंसेज
5. दत्त, आर. सी.– (1902) दी इकोनोमिक। हिस्ट्री ऑफ इंडिया।
6. पीटर, हार्नेट, 1966 – दी ब्रिटिश इम्पैक्ट आन इंडिया – सम रीसेन्ट इन्टरपेटेशन।
7. गाँधी, एम. के., (1927) – माई एक्सपेरीमेंट विथ ट्रूथ।